RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2025-27
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

गौतम बुद्ध

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर

जून-2026 | वर्ष - 18 | अंक : 05 | मूल्य : 5/-

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और दबायें।

सम्पादकीय

हम स्वतंत्रता दिवस मना रहे हैं लेकिन दलित-शोषित समाज के लोग स्वतंत्र नहीं हैं-कांशीराम

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश : सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल) मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख - रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय : 40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल : राजकुमार, उन्नाव मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य : डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001, मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय : ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.) मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक
पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020
IFSC CODE-SBIN0001784

(होशियारपुर)

15 अगस्त 1983 का दिन पूरे देश में 36वें स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर होशियारपुर (पंजाब) में डी-एस4 द्वारा आयोजित एक विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुए डी-एस4 के संस्थापक अध्यक्ष ने कहा कि-

''हम आजादी का दिन मना रहे हैं लेकिन दलित-शोषित लोग जिनकी संख्या इस मुल्क में 60 करोड़ से अधिक है, आजाद नहीं है। हमें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर भी बोलने की स्वतंत्रता नहीं है, क्योंकि जिला प्रशासन ने इस सम्मेलन के आयोजन के लिए स्वीकृति नहीं दी। आपने कहा कि इस मामले पर पंजाब के मुख्यमंत्री से बात करेंगे, जो होशियारपुर में झंडा फहराने के लिए आ रहे हैं। परन्तु उसे राज्य का मुख्यमंत्री होते हुए भी बोलने की स्वतंत्रता नहीं है और अपने जीवन के खतरे के कारण आ नहीं सके हैं। यदि यह राजकीय हालात हैं तो हम सोच सकते हैं कि पंजाब के साधारण आदमी की क्या परिस्थिति होगी?

आजाद भारत में गुलाम जनता

मा. कांशीराम जी ने अपने भाषण में बताया कि होशियारपुर का डी.एस.पी. मुख्यालय को छोड़कर भाग गया है और हमने जो स्वीकृति करने का प्रार्थना पत्र दिया था उसे भी साथ ले गया है। यही हालत यहाँ के उपायुक्त की है। मा. कांशीराम जी ने कहा कि दलित-शोषित समाज के लोग 60 करोड़ से अधिक है और देश की कुल जनसंख्या का 85 प्रतिशत है। शेष 15 प्रतिशत ब्राह्मण, बनिया और जमींदार हैं। ये साधन सम्पन्न लोग 85 प्रतिशत पर शासन करते हैं और मजबूर करते हैं, यहाँ बहुसंख्यकों पर अल्पसंख्यकों का शासन है, इसे वास्तविक लोकतंत्र नहीं कहा जा सकता। आपने कहा कि आप सब लोग इसके साक्षी हैं कि सी.आर.पी.सी. की धारा 144 के अन्तर्गत पंजाब में निषेधाज्ञा लागू है। हमने होशयारपुर नगर में विशाल जुलूस निकाला है। इसका असर यह था कि हम पुलिस अत्याचार के बारे में सोच रहे थे, दूसरी ओर पुलिस वाले सोच रहे थे कि उन्हें निशाना न बना दिया जाये। हमने अपनी शक्ति और दृढ़ निश्चय के कारण यह खेल जीता है।

इन्दिरा गाँधी मनु का शासन चाहती है

आपने जम्मू-कश्मीर विधान सभा चुनाव के बारे में विस्तार से बतलाया कि श्रीमती इंदिरा गाँधी और उसकी पार्टी नहीं चाहती थी कि हमारे लोग स्वतन्त्रतापूर्वक मतदान करें क्योंकि वह मनु के कानून के अनुसार शासन करना चाहती है जिसमें कि अछूतों को कोई अधिकार नहीं होते। यह इसका प्रमाण है कि उनकी पार्टी में 67 संसद सदस्य राजा महाराजाओं के पुत्र और पुत्रियाँ हैं जिनकी कि इसी औरत ने शाही थैलियाँ (Privy Purse) समाप्त की थी। ये राजा और रानियाँ हिन्दुवाद के संरक्षक है। इससे यह मनुवाद ताकत प्राप्त कर रहा है और शक्तिशाली होता जा रहा है, क्योंकि आर.एस.एस. ने भी इन्दिरा गाँधी को सहयोग देना शुरू कर दिया है। जम्मू-कश्मीर चुनाव में भारतीय जनता पार्टी की बुरी तरह से पराजय इसका प्रमाण है।

अन्य पिछड़े वर्ग की बुरी हालत

आपने कहा कि अन्य पिछड़े वर्गों की हालत भारत में बहुत बुरी है मण्डल आयोग की रपट के अनुसार उनकी संख्या देश की कुल जनसंख्या का 52 प्रतिशत है। लेकिन संसद में उनका प्रतिनिधित्व बहुत की कम, मात्र 8 प्रतिशत है। आपने बताया कि मताधिकार हमने बहुत मुश्किलों और संघर्ष से हासिल किया है हमें इसका प्रयोग बड़े सोच-समझकर करना चाहिए, देश में 6 राष्ट्रीय राजनैतिक दल हैं जिन पर कि ब्राह्मणों का वर्चस्व है। हमें उनमें से किसी से भी अपने लोगों को कल्याण की आशा नहीं करनी चाहिए। देश में अच्छे कानूनों की कमी नहीं है लेकिन उन पर अमल नहीं किया जाता। इसलिए हमें संगठित होना है।

ब्राह्मण, बनिया प्रेस से सावधान

मा. कांशीराम जी ने बताया कि अनुसूचित जातियों पर अत्याचारों में बहुत वृद्धि हो रही है। उनमें कमी तभी आएगी, जब हम उसका जवाब देंगे। आपने कहा कि हमें अखबारों से भी सावधान रहना चाहिए क्योंकि एकाधिकार वादी ब्राह्मण-बनिया प्रेस हमारे बारे में हमेशा झूठी खबरें छापती हैं। इसलिए हमें अपने समाचारों, विचारों और ताकत को अपने प्रकाशनों द्वारा प्रसारित करना चाहिए। अन्त में आपने कहा कि हम हर तरफ से कठिनाईयों और चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। इसलिए हमें हर तरह की चुनौती के लिए तैयार रहना चाहिए। यह सब हमें डी. सी. और डी. एस.पी. के व्यवहार के कारण सोचना पड़ रहा है, जो कि उनका रवैया सम्मेलन की स्वीकृति देने के बारे में रहा है।

होशियारपुर के डी-एस4 जिलाध्यक्ष गुरुपाल चन्द ने कांशीराम जी व उपस्थित जन समुदाय का स्वागत किया। जनसभा को रतन चन्द गाँधी (जम्मू-कश्मीर), शंकर सिंह, लाल चन्द वाल्मीकि (होशियारपुर), संत जगजीत सिंह (मालेर कोटला), कु. बबीता पाल, धर्मचन्द एड., परमजीत कौर (रोपड़), संत तपसिया गीर (दसुआ) तथा कु. हरविन्दर कौर (पिंजोर) ने सम्बोधित किया।

(बहुजन संगठक, वर्ष 4, अंक 24, 19 सितम्बर, 1983)

lkHkkj %
ek- dk'khjke lkgc
d ,frgkfld Hkk"k.k [k.M&2
i t l[;k 212 l 214 rd
,- vkj- vdyk

परिशिष्ट – पांच ट्रावनकोर में मंदिर प्रवेश

ट्रावनकोर के महाराजा ने दिनांक 12 नवंबर 1936 को अपने राज्य में अस्पृश्यों के लिए मंदिर खोलने की घोषणा की। घोषणा, इस प्रकार थी :–

''अपने धर्म में सत्य और उसकी व्यापकता पर हमें गहरा विश्वास हो गया है कि हमारा है कि हमारा धर्म पवित्र निर्देशों पर आधारित है, इसमें व्यापक सहनशीलता है, और यह जानते हुए कि शताब्दियों से यह धर्म समय की आवश्यकता के अनुसार अपने को बदलता चला आया है। अब हमारी इच्छा है कि हमारी हिंदू प्रजा किसी को जन्म के कारण, जाति अथवा संप्रदाय के कारण हिंदू धर्म से प्राप्त होने वाली सुख शांति से इंकार नहीं किया जा सकता। हमने निश्चय किया है और घोषण करते हैं और आदेश देते हैं कि लागू नियमों और शर्तों के अंतर्गत अब भविष्य में किसी भी हिंदू को जन्म अथवा धर्म के आधार पर हमारे राज्य द्वारा संचालित एवं नियंत्रित मंदिरों में प्रवेश करने पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा।''

कांग्रेसियों और श्री गांधी द्वारा इस घोषणा पर बहुत कुछ कहा गया है। उस घोषणा को हिंदू जगत में नई चेतना का जन्म बतलाया गया है। मुझे इस बात पर पूरा विश्वास नहीं है। कुछ भी हो इसका दूसरा पक्ष कुछ और भी है जिस पर ध्यान देना श्रेयस्कर है।

उपरोक्त घोषणा ट्रावनकोर के महाराजा ने अपने नाम से प्रसारित की थी। परंतु वास्तव में इसके पीछे उनके प्रधानमंत्री श्री सी.पी. रामास्वामी अय्यर का हाथ था। उसके ध्येय को समझना होगा। श्री सी. पी. रामास्वामी अय्यर 1932 में भी उन्हीं महाराजा के प्रधानमंत्री थे। 1932 में जब श्री गांधी ने गुरूवर मंदिर में अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश के बारे में विवाद खड़ा किया था तब श्री अय्यर जो व्यक्तिगत रूप से कट्टर हिंदू हैं, उस विवाद में उनका पक्ष ले रहे थे, जो मंदिर प्रवेश के विरूद्ध थे। उन्होंने इस विषय पर निम्नलिखित बयान समाचारपत्रों में छपवाया था :–

''व्यक्तिगत रूप से मैं जाति–पाति के नियमों को नहीं मानता। मैं समझता हूं कि अभी तक लोगों में अंध विश्वास है, हालांकि यह स्पष्ट नहीं है कि मंदिरों में पूजा–पद्धति दैवी आदेशों पर आधारित है। इस समस्या का स्थाई समाधान पारस्परिक समायोजन और हिंदू समाज में धार्मिक तथा सामाजिक नेताओं की जागृति और वर्तमान स्थिति को पहचान कर चलने से ही संभव है। ऐसा सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है, जिससे हिंदू जाति की एकता मजबूती से कायम रह सके।

इस संबंध में दबाव इसका जवाब नहीं है तथा राजनीतिक के बजाय सीधी कार्यवाहियों से यह समस्या और अधिक घातक हो सकती है। दुर्भाग्य से मैं श्री गांधी के इस विचार से सहमत नहीं हूँ कि मुद्दे को अंतर्जातीय सहभोज से अलग रखा जाए। इस संबंध में मैं डा. अम्बेडकर के इन विचारों से सहमत हूं कि दलित वर्गों का तत्काल सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान हमारा कार्यक्रम होना चाहिए।

इस बयान से स्पष्ट है कि 1933 में श्री सी.पी. रामास्वामी अय्यर को आध्यात्मिक विचारों ने प्रभावित नहीं किया था। 1933 के बाद आध्यात्मिक विचार जमने लगे। श्री अय्यर के विचार 1936 में कैसे बदल गए? ट्रावनकोर में 1936 में ऐसी क्या बात हुई, जिससे श्री अय्यर को विचार बदलने के लिए विवश होना पड़ा? यह स्मरणीय है कि 1936 में ट्रावनकोर में इजवा जाति का एक सम्मेलन हुआ। इजवा मालाबार में अस्पृश्य जाति से संबंधित है और मालाबार में और भी क्षेत्रों में फैले हुए हैं। वह पढ़ा लिखा समाज है और इसकी आर्थिक स्थिति मजबूत है। यह जागृत जाति भी है, जो राज्य में सामाजिक एवं धार्मिक बुराइयों के विरोध में आंदोलन किया करती है। सम्मेलन इस बात पर विचार करने के लिए बुलाया गया था कि इजवा लोग हिंदू धर्म को कोई अन्य धर्म अपनाते हेतु त्याग दें अथवा नहीं। इजवा लोग बहुत बड़ी संख्या में हैं। इतनी बड़ी जाति का हिंदू धर्म से नाता तोड़ना हिंदुओं की कब्र खोदने के समान था और उस सभा ने खतरे को साकार रूप दे दिया।

यह कहना गलत न होगा कि यह घोषणा खतरे को टालने के लिए की गई थी। यदि वह सही है, तो घोषणा की पीछे आध्यात्मिक तत्व नहीं था। यह नहीं भूलना चाहिए कि सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर का भौतिक कार्य को आध्यात्मिक रंग देने का अपना ढंग है। हिंदू विधान के अनुसार ब्राह्मण उस प्राणदंड से मुक्त हैं, जो सभी गैर–ब्राह्मणों पर लागू होता है। यह भेदभाव का ज्वलंत उदाहरण है। सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर ने अभी हाल ही में ट्रावनकोर राज्य में प्राणदंड को समाप्त करने की घोषणा करके बहुत बड़े मानवीय सुधार करने का श्रेय प्राप्त किया। वास्तव में इस घोषणा का उद्देश्य था, कानून के सामने समानता के सिद्धांत के आदेश को मान कर ब्राह्मणों को उस शिरोच्छेदन से मुक्ति दिलाना।

इस घोषणा में वास्तव में क्या परिवर्तन हुए और कहां तक यह सुप्तावस्था में रही? ट्रावनकोर के तथ्यों को समझना संभव नहीं है। मद्रास विधान सभा में मालाबार मंदिर प्रवेश विधेयक पर विवाद के दौरान सर पन्नीरसेल्वम ने कुछ तथ्य प्रस्तुत किए थे, यदि वे सच हैं तो घोषणा का सारा खोखलापन स्पष्ट हो जाता है।

सर पन्नीरसेल्वम ने कहा था :–

''प्रधानमंत्री ने जो तर्क दिए हैं, उनमें से एक था ट्रावनकोर में अस्पृश्यों के लिए मंदिर खोल देना। महाराजा को जिसे निरंकुश शक्तियां प्राप्त हैं, उनके अनुसार उन्होंने आदेश दिए हैं। परंतु यह सब कैसे हो रहा है? इस संबंध में जो आपत्तियां प्राप्त हुई हैं, उनसे विश्वास होता है कि उत्साह की पहली लहर के बाद जब से हरिजनों को मंदिर में जाने की अनुमति मिली है, तब से उन्होंने उन मंदिरों में पूजा–पाठ करना बंद कर दिया है, जो पहले वहां जाया करते थे। मैं सरकार से पूछना चाहता हूं कि वह बताए कि क्या इस कदम से कोई सफलता मिली है?''

विधेयक के तृतीय वाचन पर सर टी. पन्नीरसेल्वम ने जो बयान दिया था, उससे बहुत से लोगों को आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा –

''महाराजा जानना चाहते थे कि क्या यही सत्य है कि पटरानी के निजी मंदिर को घोषणा से मुक्त रखा गया है? इसका क्या कारण था? फिर पटरानी की पुत्री के विवाह के उत्सव के दौरान यह आवश्यक प्रतीत हुआ के मंदिर की शुद्धि कराई जाए और उनसे शुद्धिकरण के लिए कहा गया। यदि मंदिरों की इस प्रकार शुद्धि की जाने लगी, तो उस घोषणा का क्या महत्व हुआ?

इन तथ्यों को चुनौती देने का साहस सर सी.पी रामास्वामी अय्यर अथवा सी. राजगोपालाचारी किसी को नहीं हुआ। जाहिर है उन तथ्यों को चुनौती दी ही नहीं जा सकती थी।

ट्रावनकोर में समाज सुधार के लिए मंदिर प्रवेश ही गिनाया जा सकता है। क्या धार्मिक स्तर पर समानता लाने के लिए इस प्रकार से मंदिर प्रवेश से ही सब कुछ हो सकता है? उदाहरणार्थ क्या देवस्थान विभाग अछूतों और शूद्रों के हाथों में सोंप दिया जाएगा? घोषणा को नौ वर्ष हो गए हैं परंतु ट्रावनकोर में धर्म के लोकतंत्रीकरण की दिशा में कुछ भी नहीं किया गया।

क्या ट्रावनकोर के अस्पृश्य मंदिर प्रवेश की कुछ कीमत चुकाएंगे? मैं कुछ नहीं कह सकता। परंतु मैं यहां पर आल ट्रावनकोर पुलयार चर्मार आयकिआ महासंघम का पत्र जो मुझे संबोधित है, नीचे उद्धत करना चाहूंगा। यह पत्र 24 नवंबर, 1938 का है।

कैम्प मय्यानाड

क्विलोन– 24–11–1938

सेवा में,

डा. अम्बेडकर,

बम्बई।

आदरणीय महोदय,

मैं निम्नलिखित तथ्यों की ओर सादर आपका ध्यान आकर्षित करते हुए आप की अमूल्य सलाह जानना चाहता हूं। ट्रावनकोर की हरिजन जाति का नेता होते हुए मेरा यह परम कर्तव्य है कि इस राज्य के हरिजनों को जिन मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है, उनकी ओर आपका ध्यान दिलाऊं।

1. ट्रावनकोर राज्य के महाराजा ने मंदिर प्रवेश की जो घोषणा की है वह हरिजनों के लिए वास्तव में एक वरदान हैं। परंतु हरिजन मंदिर प्रवेश के अतिरिक्त अन्य सामाजिक कष्टों को भुगत रहे हैं। सरकार हरिजनों के उत्थान के लिए कोई कदम नहीं उठाती।

2. पन्द्रह लाख हरिजनों में कुछ ग्रेजुएट हैं, आधा दर्जन ग्रेजुएट से नीचे और 50 स्कूल फाइनल तथ 200 से अधिक वर्नाक्यूलर सर्टिफिकेट वाले हैं। यद्यपि सरकार ने लोक सेवा आयोग बनाया है, परंतु हरिजनों की बहुत ही कम नियुक्ति की जाती है। सभी नियुक्तियां सवर्णों की होती हैं। यदि किसी हरिजन की नियुक्ति हो जाती है, तो केवल एक दो सप्ताह के लिए। सार्वजनिक सेवाओं में भारती के नियमों के अनुसार प्रार्थी को एक साल बाद ही पुनः प्रार्थनापत्र देने की अनुमति है जबकि सवर्ण हिंदू को एक साल अथवा उससे अधिक समय के लिए नियुक्त किया जाता हैं। जब सभा के सामने नियुक्तियों की सूची लाई जाती है, तो सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व के अनुसार नियुक्तियां दिखाई जाती है। परंतु कुल सेवा काल एक सवर्ण के बराबर होगा। इस प्रकार सार्वजनिक सेवा सवर्णों की जागीर बनी हुई है। हरिजनों को इससे कोई लाभ नहीं।

3. कुछ वर्ष पहले महाराजा ने घोषणा की थी कि प्रत्येक हरिजन को रहने के लिए तीन एकड़ जगह दी जानी चाहिए, परंतु कार्यकर्ता लोग जो सवर्ण हिंदू हैं, घोषणा को लागू ही नहीं करते, यद्यपि सरकार कस्बों के पास चरागाह की जमीन उन्हें देना चाहती है। परंतु हरिजन को कोई जमीन नहीं दी जाती है। हरिजन सवर्ण के घेरे में ही रहते हैं और अनेक मुसीबतों से होकर गुजर रहे हैं। यद्यपि बहुत सारी भूमि ''सुरक्षित'' पड़ी हुई है, परंतु हरिजनों के प्रार्थना–पत्र पहुंचने पर भी उन्हें जमीन नहीं दी जाती और न कोई सुनवाई होती है। अधिकतर भूमि पर सवर्ण हिंदू काबिज हैं।

4. सरकार हरिजन जाति के प्रत्येक सदस्य को प्रत्येक वर्ष विधान सभा में नामजद करती है। यद्यपि वे हरिजनों की मुसीबतों को सभा में प्रस्तुत करने के लिए चुने जाते हैं। वे केवल सरकार की मशीन समझे जाते हैं। अर्थात सवर्ण हिंदुओं के खिलौने, जिनसे सवर्ण हिंदू लाभान्वित होते हैं। इस तरह हरिजनों की मुसीबतें दूर नहीं की जा सकती।

5. ट्रावनकोर के सभी हरिजन खेतिहर मजदूर हैं। वे सवर्ण हिंदुओं के नौकर हैं, जिनके साथ वे बर्बरता का व्यवहार करते हैं और कोई उनकी रक्षा नहीं करता। राज्य में प्रत्येक हरिजन को दैनिक मजदूरी एक आना दी जाती है। मंदिर प्रवेश के बाद भी सामाजिक कठिनाइयां ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। ट्रावनकोर राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में फैले कारखानों में काम करने वाले तथा राज्य के अधिकारी सभी सवर्ण हिंदू हैं और वे उत्तरदायी सरकार के लिए आंदोलन कर रहे हैं। हरिजन और कारखानों में नौकरियों की मांग कर रहे हैं, परंतु ट्रावनकोर का आंदोलन सवर्ण हिंदुओं का आंदोलन है, जिसके द्वारा वे सरकारी नौकरियों और कारखानों में हरिजनों को निकालने का प्रबंध कर रहे हैं। वे अधिक ऊंचे वेतन और सुविधाओं की मांग कर रहे हैं। वे हरिजन मजदूरों की ओर कोई ध्यान नहीं देते, जबकि ट्रावनकोर के लोग कारखानों के मजदूरों के आंदोलन से पागल हो उठे हैं। हरिजन कर्मचारियों का वेतनमान बहुत कम है जबकि अन्य मिल मजदूरों का वेतन उनसे तीन गुना अधिक है।

6. भूख और जीवनयापन के पर्याप्त साधन न होने के कारण हरिजनों के बच्चे क्षुब्ध हो जाते हैं, जिनसे उनके बच्चे स्कूलों में अनुत्तीर्ण हो सकते हैं। घोषणा से पहले हाई स्कूलों की परीक्षा में बैठने के लिए 6 वर्षों की छूट हुआ करती थी, जो अब घटा कर तीन वर्ष कर दी गई है जिससे असफल होने पर बड़ी तादाद में विद्यार्थियों ने पढ़ाई छोड़ दी है।

7. दलित वर्गों के लिए एक विभाग है, जिसके अध्यक्ष सी. ओ. दामोदरन (पिछड़ी जातियों के संरक्षक) हैं। यद्यपि

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और दबायें।

खर्च के लिए बड़ी धनराधि स्वीकार की जाती है और वर्ष के अंत में उसकी करामात से लगभग दो तिहाई धनराशि खर्च नहीं हो पाती। वह सरकार को रिपोर्ट दे दिया करते हैं कि धन और खर्च करने का कोई रास्ता नहीं है। दलित वर्गों के लिए नियत राशि में से 95 प्रतिशत धनराशि कर्मचारियों के वेतन भुगतान पर खर्च होती है, जो सवर्ण होते हैं और केवल पांच प्रतिशत से ही दलित लाभान्वित हो पाते हैं। अब ट्रावनकोर के तीन क्षेत्रों में सरकार कुछ कालोनियां बनवाने जा रही है। अधिकारी सवर्ण हिंदू है। मेरे विचार से योजना सफल न होगी, क्योंकि सरकार उस पर कोई ध्यान नहीं देती है। मुझे अफसोस है कि ट्रावनकोर सरकार हरिजनों के हित में एक आना खर्च करती है, जबकि कोचीन राज्य उसी मद पर एक रुपया खर्च जाता है।

8. ट्रावनकोर की अधिकतर प्रजा राज्य कांग्रेस संस्था के अंतर्गत उत्तरदायी सरकार की मांग के लिए बड़े जोरों से आंदोलन कर रही है। उस संस्था के नेता राज्य की उन चार बड़ी जातियों से संबंधित हैं – नायर, मुसलमान, क्रिश्चियन और इजवा जाति। राज्य कांग्रेस के अध्यक्ष श्री थानू पिल्लई ने एक बयान जारी किया है, जिसमें उन्होंने दलित वर्गों के लिए विशेष छूट पर जोर दिया है। दलित वर्ग के सभी नेता राज्य कांग्रेस के रूख की प्रतिक्षा कर रहे हैं। अब हम समझते है कि उन नेताओं के वादों में कोई यथार्थ नहीं है।

9. अब मुझे पूरा विश्वास है कि नेताओं ने दलित वर्ग के हितों की उपेक्षा की है। कांग्रेस की शुरूआत राष्ट्रीयता के सिद्धांत पर हुई थी, परंतु अब यह पूर्णतया सांप्रदायिक संस्था हो गई है। नेताओं में अब सांप्रदायिक भावना घर कर गई है। सभी सार्वजनिक सभाओं में केवल उन्हीं चार बड़ी जातियों की बात की जाती है और हमारे विषय में कोई सोचता तक नहीं। मुझे डर है कि यदि ट्रावनकोर के राजनीतिक आंदोलन के नेताओं की यही गति रही तो उत्तरदायी सरकार प्राप्त हो जाने पर दलित वर्गों की दशा और भी दयनीय हो जाएगी, क्योंकि तब उपरोक्त चारों बड़ी जातियों की मुट्ठी में ही वह पूरी सरकार होगी और दलित वर्गों के सभी अधिकार और सुविधाएं उन जातियों द्वारा छीन ली जाएंगी। राज्य कांग्रेस की कार्य समिति की बैठकों में लगभग दो तिहाई समय अलेप्पी नारियल जटा फैक्टरीज की हड़ताल के संबंध में वाद–विवाद पर खर्च हो जाता है, परंतु हरिजन कर्मचारियों के विषय में जो ढेर सारी परेशानियों से होकर गुजर रहें हैं, बैठक में कोई विचार नहीं किया जाता। उन कारखानों में कर्मचारी सवर्ण जातियों के हैं और उत्तरदायी सरकारों की प्राप्ति का आंदोलन हरिजन आंदोलन के विरूद्ध है। राज्य कांग्रेस के प्रत्येक नेता का ध्येय है – सवर्ण जातियों का उठाना। बड़ी जातियों के नेता केवल स्वार्थी प्रवृत्ति के हो गए हैं, जो अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए दलित वर्गों को बलि देने जा रहे हैं।

10. राज्य के दलित वर्ग की यह दयनीय दशा है। राज्य में हमारे अपने अधिकारों को मांगे जाने के क्या तरीके हो सकते हैं। ऐसे समय में आपकी अमूल्य सलाह का मैं अनुरोध करता हूं और आपके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा हूं।

कष्ट के लिए क्षमा करें

आपका विश्वासपात्र
श्री नारायण स्वामी

यदि मंदिर प्रवेश योजना अंततः अस्पृश्यों को उनके स्थाई अधिकारों से वंचित करने की है, तो ऐसा आंदोलन आध्यात्मिक भावना के विरूद्ध ही नहीं, वरन् शरारतपूर्ण है और ऐसी दशा में ईमानदार लोगों का दायित्व हो जाता है कि अस्पृशों को ऐसे खतरों से सचेत कर दें।

lkHkkj %
Mk- vEcsMdj laiw.kZ ok³e; [k.M 16
i`"B la[;k 330 ls 335 rd
ckck lkgsc

दलित समाज सवर्णों के आतंक से आतंकित

24 फरवरी 1996 को बसपा के केन्द्रीय अध्यक्ष मान्यवर कांशीराम जी ने नेतृत्व में उनके निवास पर दिल्ली प्रदेश के बसपा कार्यकर्त्ताओं की एक बैठक हुई थी जिसमें दिल्ली प्रदेश के जिलाध्यक्षों एवं कार्डीनेटर्स को मनोनीत किया गया था। उनमें दक्षिण जिला के लिए कोर्डीनेटर हेतु मुझे चुना गया था, तब मान्यवर कांशीराम जी ने अपने संबोधन में कहा था– 'भले ही हमारा देश विदेशी आतंकवादियों से आतंकित है, किन्तु इस देश में सम्पूर्ण दलित समाज उनके निकटस्थ सवर्णों के आतंक से अधिक आतंकित है।'

उक्त विचारों को स्पष्ट करने के लिए हमें देखना है भारत की वर्ण–व्यवस्था सामाजिक अन्याय पर टिकी हुई है इसलिए देश में अशान्ति निश्चित है। अन्याय, अत्याचार, दमन तथा हिंसा से ही प्रतिहिंसा और आतंकवाद का जन्म होता है। सम्पूर्ण देशों में सवर्णों की प्रतिहिंसा के मूल में सामाजिक अन्याय पर आधारित वर्ण–व्यवस्था है। जबकि आमतौर पर अन्याय और हिंसा की घटनाओं को कानून व्यवस्था की समस्या के रूप में टालने के लिए अधिक देखा जाता है, परन्तु वास्तव में यह सामाजिक वर्ण–व्यवस्था की समस्या है। भारत की सामाजिक वर्ण–व्यवस्था में ही आतंकवाद के बीज हैं। इस दोषपूर्ण व्यवस्था ने आतंकवाद के दो रूप विकसित किए हैं– पहला सामाजिक आतंकवाद का रूप जिसे वर्ण आधारित आतंकवाद का नाम दिया जा सकता है, और दूसरा राज्य आतंकवाद का रूप जिसे हम सरकारी अथवा प्रशासनिक आतंकवाद कह सकते हैं।

शताब्दियों से इस देश में वर्ण–आधारित आतंक मौजूद रहा है, इसका ध्येय है, द्विज सत्ता को कायम रखना, अर्थात् चतुर्वर्ण–व्यवस्था में सवर्णों का वर्चस्व बनाये रखना या दलितों का सामाजिक तौर पर बहिष्कार करना। इसलिए सवर्णों का, निशाना सदैव से शूद्र या दलित जातियां रही हैं। दलित जातियों को आतंकित कर सवर्णों के अधीन रखना ही इनका मुख्य कार्य रहा है और देश के विभिन्न स्थानों पर होने वाले तमाम दलित हत्याकांडों के मूल में यही है। इस आतंकवाद की विशेषता यह है कि इसमें सामूहिक रूप से दलितों को दण्ड देता है। यह वह आतंकवाद है, जो एक दलित द्वारा सामाजिक वर्ण–व्यवस्था का उल्लंघन करने पर गांव के सभी दलितों को दण्डित करता है। दलितों को शिक्षा से वंचित रखना, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर न बनने देना, सवर्णों के सामने चारपाई पर न बैठने देना, द्विजो के सभी दास–कर्म करना कुछ ऐसी सामाजिक व्यवस्थाएं हैं, जिनका उल्लंघन करना सीधे मौत को दावत देना है।

जिस देश में वर्ण–व्यवस्था पर आधारित धार्मिक साहित्य लिखा गया, उसे लागू करने के लिए तत्कालीन राजनैतिक व्यवस्था कायम की गयी, उसे मनवाने के लिए दंड–विधान बनाये गये जो मनुस्मृति जैसी दंड सहिता के नाम से आज भी जानी जाती है, जिसका आधार भी जाति प्रणाली ही था। यहां तक कि कौटिल्य का अर्थशास्त्र कहता है कि यदि शूद्र किसी वस्तु को चुराता है तो उसका हाथ काट दिया जाए, यदि उसी वस्तु को वैश्य चुराये तो उसे कुछ (मुद्रा) दंड स्वरूप वसूल किये जायें; यदि क्षत्रिय चुराये तो उसे फटकारा जाय, किन्तु उसी वस्तु को ब्राह्मण चुराये तो उससे विनय पूर्वक कहा जाय कि वह दोबारा चोरी न करे। मनुस्मृति में तो यहाँ तक कहा गया है कि 'मौन्डन्यमेव विप्रीय मृत्युदंड, अर्थात, ब्राह्मण को मृत्युदण्ड देना है तो मात्र उसका मुन्डन कर दिया जाय। इस तरह का विधान शूद्रों के खिलाफ बनाया गया था, जिसका उपयोग तत्कालीन बौद्ध समाज और बौद्ध दर्शन के विरुद्ध ही माना जाता है।

वर्ण आधारित आतंकवाद पहले चरण में दलितों का सामाजिक बहिष्कार करने की कार्रवाई करता है। यह सबसे ज्यादा खतरनाक है। चूंकि दलित समाज आर्थिक रूप से पूरी तरह सवर्णें पर निर्भर करता है, शौच क्रिया भी उनकी जमीनों पर करता है, इसलिए बहिष्कार की कार्रवाई उनके लिए सुगम होती है। डॉ. आम्बेडकर ने लिखा है कि हम इस सामाजिक बहिष्कार से ज्यादा सशक्त किसी भी हथियार को नहीं मानते, जो दलितों को दबाने के लिए काम में लिया जाता है। इसके सामने खुली हिंसा का सिद्धान्त भी फीका पड़ जाता है। जब इस दण्ड के बावजूद व्यवस्था के खिलाफ दलितों का विद्रोह जारी रहता है तो यह उन्हें अपने दूसरे आतंकवादी चरण द्वारा शारीरिक यातनायें देता है। उनके घरों में आग लगा देना, उन्हें एक जगह इकट्ठा कर गोलियों से भून देना, उनकी स्त्रियों के साथ सामूहिक बलात्कार करना इत्यादि इस दण्ड में शामिल हैं। भाजपा और संघ परिवार ने तो इसे राष्ट्रवाद का एक नया रूप दिया है। जब से इसने राष्ट्रवाद का रूप धारण किया है तब से धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय भी इसके कहर से ग्रस्त हो गये हैं। अयोध्या में बाबरी मस्जिद का विध्वंस, मुम्बई और सूरत में मुसलमानों का रोंगटे खड़े कर देने वाला कत्लेआम राष्ट्रवादी आतंक की जिन्दा मिसालें हैं।

इस आतंक का दूसरा रूप है, राज्य आतंकवाद। अर्थात् सरकारी या प्रशासनिक आतंकवाद जब सवर्ण प्रशासन में आया और वह पुलिस, न्यायालय में न्यायाधीश तथा दण्डाधिकारी बना तो उसका रहन–सहन और खान–पान तो बदला, परन्तु उसकी सवर्ण मानसिकता में कोई परिवर्तन नहीं आया। प्रशासक के रूप में भी उसकी मानसिकता दलित–विरोधी ही बनी रही। इस मानसिकता के तहत यह प्रशासक–वर्ग भी सवर्ण भावनाओं में भागीदार बन गया। इसका परिणाम यह हुआ कि दलितों के मामलों में पुलिस अधिकारी और न्यायाधीश का रवैया पक्षपात पूर्ण रहा। थानों में शिकायत दर्ज नहीं की जाती। यदि दर्ज की जाती है, तो उन पर प्रभावी कार्रवाई नहीं की जाती। अनेकानेक मामलों में पुलिस अधिकारी और न्यायाधीश के फैसले सवर्णों के पक्ष में होते हैं। वास्तव में सवर्ण प्रशासक वर्ग, दलितों और सवर्णों के बीच संघर्ष में अपनी भूमिका सवर्णों के एजेन्ट के रूप में निभाता है। सवर्ण पुलिस, दलितों के साथ उतनी ही क्रूरता से पेश आती है जितनी क्रूरता से गांवों में दलितों के विरुद्ध सवर्ण पेश आते हैं। इसी का नाम सरकारी या प्रशासनिक आतंकवाद है, जिसके राष्ट्रवादी रूप से अब मुसलमान भी पीड़ित हैं। मेरठ और बिहार के भागलपुर में मुसलमानों का कत्लेआम सरकारी आतंकवाद के नृशंस उदाहरण हैं। दलित तो इनके शिकार हर रोज कहीं न कहीं होते ही रहते हैं जैसे जहानाबाद के लक्ष्मणपुर बाये गांव में थे सामन्तों की रणवीर सेना ने मासूम बच्चों, निरीह औरतों सहित 64 असहय असुरक्षित, असावधान दलितों की नृशंस हत्या कर देना। अब दोनों मिलकर द्विगुणित शक्ति से दलितजातियों पर कहर बरसा रहे हैं। हकीकत यह है कि अब वर्ण आधारित आतंक, सरकारी आतंकवाद के सरक्षण में काम करता है।

इस सरकारी आतंकवाद की कुछ हृदय–विदारक घटनाएं उल्लेखनीय हैं। रायबरेली के भदोरबर थाना क्षेत्र में छह वर्षीय दलित बालिका के साथ बलात्कार हुआ लेकिन घटना को दबाने और तोड़ने–मरोड़ने में माहिर थानाध्यक्ष ने मामले को दर्ज नहीं किया। उसी समय बिजनौर जिले के दारानगरगंज में पुलिस अधीक्षक और अपर पुलिस अधीक्षक ने निर्दोष स्त्री–पुरुष और बच्चों पर दानवता की सारी सीमाएं लांघकर अपनी दरिन्दगी दिखायी। कानपुर में कल्याण सिंह मंत्रिमंडल की केबिनेट मंत्री प्रेमलता कटियार ने अपने गुण्डों और प्रशासन की मदद से महिपालपुर में दलित बस्ती को जबरन उजाड़कर उनको घर से बेघर कर दिया। उसी वर्ष इलाहाबाद का दुर्गा काण्ड उजागर हुआ, जिसमें सात महीने तक दुर्गा के साथ पुलिस ने सामूहिक बलात्कार किया और मऊ के शमशाबाद में सवर्णों ने दलित महिलाओं के साथ बलात्कर किया। थाना इन्चार्ज ने रिपोर्ट लिखने के बजाय पीड़ित महिलाओं को ही सवर्णों के घर ले जाकर 50–50 रूपया

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

दिलवाकर धमकाते हुए समझौता करवा दिया। कानपुर में ही घर से अपने मंदिर तक जाने के लिए दलितों के खेत उजाड़ कर सड़क बनवायी, जिसमें विरोध करने पर पांच दलितों को झूठे केस में जेल भिजवा दिया। जिला प्रशासन ने उनकी कोई सहायता नहीं की। मिर्जापुर में दलित राजस्व बकायादारों को नंगा कर उल्टा करके बेरहमी से पीटा गया। इस दिशा में दलितों के साथ होने वाली घटनाओं और काण्डों पर सरकार ने कोई संरक्षण की योजना नहीं बनायी। जबकि यह आतंक सारे आतंकवादों से ज्यादा गम्भीर और खतरनाक हैं। वर्ण–व्यवस्था देश में सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना में सबसे बड़ी बाधक हैं। अब इस बाधा को शीघ्र ही दूर किये जाने की जरूरत है। क्योंकि यह आतंक को पैदा कर रहा है और एक खण्डित राष्ट्र का निर्माण कर रहा है।

आज दलित उत्पीड़न कानून के दुरुपयोग का यथार्थ नजर आ रहा है। भारत की अर्थव्यवस्था अगर कृषि पर आधारित नहीं वरन जन्म पर आधारित है। हजारों वर्षों पुरानी रूढ़िवादी मान्यताओं के कारण जाति के नाम पर ही अधिकार मिलते हैं और अधिकारों का हनन भी होता है। जाति के नाम पर शिक्षित होते हैं तो जाति के नाम पर अशिक्षित रह जाते हैं। जाति के नाम पर जहां सम्मान मिलता है तो जाति के नाम पर अपमान भी होता है। इस व्यवस्था से दुःखी, अधिकारों से वंचित प्रायः वे लोग रहे हैं जिनको आज अछूत या दलित के नाम से पुकारते हैं, जो आज राष्ट्रीय मुख्य धारा से वंचित है।

आज भी दलित समाज के लोग अधिकतर खेतों में काम करते हैं लेकिन खेतों के मालिक नहीं हैं। उद्योग व कारखानों में काम करते हैं। लेकिन उद्योग व कारखानों के मालिक नहीं हैं। भट्टों पर ईंट थापते हैं लेकिन भट्टा मालिक नहीं है। बस, ट्रक, टैक्सी, टैंपों आदि परिवहन संबंधी वाहनों को चलाने में चालक और परिचालक हैं लेकिन उनके मालिक नहीं हैं। बहुमंजिली इमारते खड़ी करते हैं लेकिन रहते हैं झुग्गी, झोंपड़ियों में। चारपाईयां बनाते हैं लेकिन खुद जमीन पर सोते हैं। या सवर्ण अपने यहां अथवा अपने सामने उन्हें चारपाई पर बैठने नहीं देते। जूते बनाते हैं, पर खुद अधिकतर गरीबी के कारण नंगे पाव रहते हैं। आज उन दलितों के जीवन में जो भी परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं, निसंदेह बाबा साहब आम्बेडकर के प्रयास से आरक्षण के कारण ही हैं। यदि आरक्षण नहीं होता हो वह परिवर्तन भी देखने को नहीं मिलता। परिवर्तन भी गुणात्मक नहीं है। जिस अनुपात में अन्य वर्गों की जीवन शैली में परिवर्तन आया है उसी अनुपात में दलितों में परिवर्तन नहीं आया। दोनों वर्गों के बीच की खाई और ज्यादा गहरी हुई है।

इतनी विषमताओं के बावजूद दलितों ने प्रायः देश के प्रति गद्दारी नहीं की, न विदेशियों से सांठगांठ ही की। न उनमें आतंकवादी और उनकी प्रवृत्ति के लोग ही हैं। दलित भू–माफिया नहीं होते। न किसी पर हमलावर होते हैं। विदेशों में न उनका धन है, देश के प्रति कभी विद्रोह नही किया, सरकारी वाहन नहीं जलाए। किसी की धन संपत्ति में आग नहीं लगाई, बल्कि निरन्तर ईमानदारी से सेवा व निर्माण का कार्य करते रहे हैं। फिर भी अन्य वर्गों (सवर्णों) के दिल और दिमाग में दलितों के प्रति करूणा, मैत्री, भातृभाव और मानवता के साथ समानता या समता का भाव नहीं रहा है। तथाकथित अत्याचार निरोधक एक्ट के लागू होने के बाद भारत सरकार की रिपोर्ट के अनुसार उनके विरुद्ध हर वर्ष बीसियों हजार अत्याचार होते हैं। दलितों पर अत्याचार के मामले लगातार बढ़ रहे हैं फिर भी कुछ राजनैतिक लोग आए दिन चुनाव प्रचार के नये–नये मुद्दे तलाशने की होड़ में अधिनियम के दुरुपयोग का मिथ्या प्रचार कर रहे हैं। इस दुष्प्रचार से उन्हें राजनैतिक लाभ मिले या न मिले मगर फिर भी देश और समाज का तो वे नुकसान कर ही रहे हैं इससे सामाजिक एकता को खतरा पहुंच रहा है।

आज देश में सवर्णों का दलितों पर आतंक बढ़ता ही जा रहा है, जब तक जाति व्यवस्था की जननी वर्ण–व्यवस्था मौजूद है तब तक छुआछूत, ऊंच–नीच की भावना, सामाजिक अन्याय तथा असमानता कायम रहेगी और दलितों का न सामाजिक सम्मान होगा और न उसका भविष्य उज्जवल ही हो सकेगा। उसके लिए हमें बाबा साहब आम्बेडकर और कांशीराम के निर्देशों पर चलकर ही सवर्णो की आतंकित करने वाली कुटिल नीतियों के प्रतिपक्ष में शिक्षा–दीक्षा ग्रहण करनी पड़ेगी एवं आपसी संगठन के साथ उनके विरूद्ध सामाजिक समता को कायम करने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा, जिससे इस आतंक से मुक्ति मिल सके।

lkHkkj %
cgtu uk;d ekU;oj dk'khjke
Lefr xzFk
i`t la[;k 121 ls 123
, l-, l-xkSre

संतपुरूषों के आंदोलन भक्ती के नहीं मानव मुक्ति के

सदपुरूषों के आंदोलन (संत) भक्ती के आंदोलन थे इस तरह का झूठा प्रचार ब्राम्हणी लोगों द्वारा बड़े सुनियोजित ढंग से किया जाता है। न्यायमूर्ती गोविंद रानडेने इस तरह के झूठे प्रचार का प्रारंभ अपने साहित्य के माध्यम से किया। यदि संतों का आंदोलन भक्ती का आंदोलन होता तो ब्राह्मण भक्ती रस में डूबने के बजाय संतो का विरोध करने की क्या वजह थी? पहली बात तो यह की उन सभी संतो को ब्राह्मणों ने इतना सताया था कि उन्होंने इस मानव मुक्ती के आंदोलन को त्याग देना चाहिए। लेकिन वे उस आंदोलन से बिल्कुल ही हटे नहीं तब उन विदेशी ब्राह्मणों ने अपने परंपरागत हथियार का इस्तेमाल किया। और उनका वह हथियार था हत्या करो और ब्राह्मणी व्यवस्था को मजबूत करने का काम करो। ब्राह्मणों द्वारा संतों के आंदोलन का विरोध करने की वजह क्या थी? उस आंदोलन से ब्राह्मणों को कौन–सा खतरा पैदा हो गया था? संतो का आंदोलन पुरोहितवाद से मुक्ती और किसी भी प्रकार के डर से मुक्ती का आंदोलन था। इसलिए ब्राह्मणों ने सभी संतो की हत्या करने करने में कोई संकोच न ही किया न ही इस बात का प्रमाण है। उनके द्वारा हत्या करने का प्रयास होना इसका मतलब ब्राह्मणों को निश्चित रूप से यह आंदोलन बहुत ही भयंकर लग रहा था।

संक्षेप में हम यहाँ अपने संतो के आंदोलन को जानना चाहते हैं। इसमें संत रविदास, संत कबीर, आदि से उत्तर भारत में जो धक्का लगा। यह आंदोलन पंद्रहवी सदी में बहुत ही उच्चस्तरीय था।

संत कबीर ने ब्राह्मणी व्यवस्था के विद्रोह में आवाज उठाई। संत रविदास और संत कबीर ने ब्राह्मणी व्यवस्था के विरोध में जबरदस्त पहल की। इन संतों ने निराश न होकर उस ब्राह्मणी व्यवस्था के विरोध में खड़े रहने का साहस दिखाया। तब संत रविदास को एक षड्यंत्र के तहत ब्राह्मणों के द्वारा टुकड़े–टुकड़े करके मरवाया गया। उनकी हत्या उत्तर प्रदेश में नहीं हुई बल्कि राजस्थान के चित्तौड़ में की गई। उनकी हत्या के प्रमाण संत मीराबाई के भजन में प्राप्त होते है।

संत कबीर की वाणी बहुजन समाज के हजारों साल के जखमों पर मरहम पट्टी करने वाले और ब्राह्मणी व्यवस्था पर कोड़े बरसाने वाली थी।

उन्होंने बहुजन समाज को ब्राह्मणी व्यवस्था के कीचड़ से बाहर निकालने का प्रयास किया। तब जागरूकता इतनी फैली की ब्राम्हणों ने संत कबीर की हत्या करने की योजना बनाई और वे उसमें सफल भी हुये। संत रवीदास और संत कबीर की हत्या की और उसके बाद ब्राह्मण इतिहासकारों ने क्रमिक किताबें लिखने वाले इन कमलकसाई द्वारा उस हत्या को छुपाने के लिए अपराधबोध की भावना से और भी कुछ षडयंत्र रचे गये। उन्होंने इन संतो के नाम पर चमत्कार, अंधश्रद्धा फैलाने का प्रयास किया। वे उन संतों के दोहे झूठे होने का प्रचार करते हैं। फिर वे और भी झूठी बातें फैलाने का काम करते हैं और इन संतो का ब्राह्मीकरण करने का काम करते हैं इन संतो की प्रतिमा उनके महान कार्यो के कारण लुप्त नहीं होती इसलिए वे उनकी हत्या करने का षडयंत्र रचाते हैं। वे संतो की हत्या करने के बाद भी झूठा प्रचार करते हैं। फिर संत में वे लोग उन महापुरूषों का ब्राह्मणीकरण करते हैं। इसके लिए वे दो बातों का इस्तेमाल करते हैं। (1) ब्राह्मण गुरु होने के प्रचार करते हैं, वा (2) ब्राह्मण पिता होने का प्रचार करते हैं। इसलिए हम कहते हैं कि वे हत्या को छुपाने के लिए ही इस तरह का प्रयास करते हैं। उनकी परंपरागत मान्यता है कि ब्राह्मणों के बगैर इस तरह के झूठा प्रचार में ब्राह्मण कमलकसाई करते हुये दिखाई देता है। जब वे जानते कि प्रारंभ में उनकी बात पर कोई विश्वास नहीं करता तब वे जोर–जबरदस्ती उनके मुँह से इस तरह की बात कहलवाने की योजना बनाते हैं। संत कबीर और संत रविदास को बदनाम करने के लिए यह ब्राह्मण कमलकसाई अपने गिद्ध नजरें लगाये बैठे हैं।

ब्राह्मणी व्यवस्था ने जाना की संतो ने सभी राज्यो में अपना अभियान संगठित रूप में शुरू किया है। मध्ययुगीन भारत में हमें यह दिखाई देता है कि संत नामदेव (कपड़े सीने का काम करने वाला) ने वारकरी आंदोलन की नींव रखी है। बाद में इस आंदोलन को पूर्णत्व की ओर ले जाने का काम सम्राट अशोक के वंशज संत तुकाराम ने किया है। संत नामदेव ने पंजाब में कई यात्रायें की वहाँ उनका उनके मूलनिवासी बहुजनों ने पूरे सम्मान के साथ सत्कार भी किया। सिखों के पवित्र ग्रंथ गुरुग्रंथसाहेब ने संत नामदेव 61 अभंग संग्रहित करके सम्मिलित कर दिये गये हैं। लेकिन वह संगठित प्रयास लंबे समय तक बरकरार न रहे इसलिए ब्राह्मणवादियों ने एक ओर संतो की हत्याएं की और दूसरी ओर सिक्खों के प्रमुख नेतृत्व की भी हत्या की गुरू गोविन्द सिंह के दो बेटे फतेह सिंह और जोरावर सिंह को पकड़कर मारने का घिनौना कृत्य कश्मीरी ब्राह्मण शंभु ने किया। जिनके वारीस जवाहर लाल नेहरू हैं। मुगलों के, शासनकाल ने शासन और प्रशासन में ब्राह्मण लोग बहुसंख्य होते थे मुगल शासन विदेशी वंश के है। उनकी विदेशी, ब्राह्मणों के साथ में लेकरही राज्य किया जा सकता है।'' इसलिए मुगलों के विरोध में ब्राह्मणों ने कोई भी विद्रोह नहीं किया है। ब्राह्मणों का बहुजनों पर असीम वर्चस्व बना रहे यही उसका लक्ष्य रहा है।

मध्ययुगीन भारत में पूरे देश के स्तरपर संतो के आंदोलन की बहुत बडी लहर चली दिखाई देती है। उन संतो के आंदोलन के प्रेरणास्त्रोत भी तथागत बुद्ध ही थे। महाराष्ट्र पांडुरंग अर्थात बुद्ध को प्रमुख मानकर वारकरी आंदोलन शुरू था। उसकी सभी संकल्पनाये बुद्ध धम्म से ही ली गई है। जैसे 'बाधा' शब्द बुद्ध के वचनों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। उस शब्द को संतों ने अपने काव्य के लिए इस्तेमाल किया है। उन्होंने तथागत के साथ चिवर को अपने कपड़ों के रंग के लिए स्वीकार किया। इन संतों के आंदोलन में शूद्र और अतिशूद्र लोग बहुत बड़ी संख्या में सम्मिलित हुये हैं।

मराठी संत चोखा मेला की हत्या भी ब्राह्मणों द्वारा ही करवाई की गयी थी। उन्होंने संत चोखामेला को इस तरह से कुचलकरके मारा था की उनकी हड्डियाँ भी प्राप्त नहीं हो सकी। संत नामदेव ने संत चोखामेला की स्मृती को जगाया इसलिए ब्राह्मणों ने संत नामदेव को पंढरपूर (महाराष्ट्र) के विठ्ठी (तथागत) के मंदिर में न जाने का फतवा निकाला था। संत नामदेव को वारकरी धर्म आंदोलन का जनक माना जाता है। ऐसा भी कहा जाता है की, ''नामदेव ने बनाई नींव, तुका हुआ कलश'' यही कहना उचित होगा।

lkHkkj %
Mk ckcklkgc dh gR;k
fdlu] D;ksa vkSj dSls dh\
i`t la[;k 33 ls 35
iks- foyk l [kjkr

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

युग निर्माता कबीर (1398–1575)

सन्त कबीर के जन्म स्थान तथा जन्म तिथि के बारे में अभी भी कोई प्रामाणिक सूचना उपलब्ध नहीं हैं। '' कबीर चरित बोध '' में इनका जन्म–स्थान वाराणसी और जन्मतिथि जेष्ठ पूर्णिमा सन् 1455 (सन् 1398) बतायी गयी है। इस कबीर पन्थी ग्रन्थ में घटनाओं का वर्णन जिस शैली में किया गया है, उससे उनके ऐतिहासिक होने में सन्देह है। इसके अतिरिक्त दूसरे कई लेखक इनके सम्बन्ध में कुछ दूसरी ही बात कहते हैं। बनारस गजेटियर में कहा गया कि कबीर का जन्म वाराणसी या उसके आस–पास के किसी स्थान में न होकर आजमगढ़ जिले के मोहल्ला बेलहर में हुआ था, जो आज भी वहां के पटवारी के कागजों में बेलहर पोखर के रूप में लिखा मिलता है। चन्द्रवली पांडये ने इसे ''पक्की'' खोज की संज्ञा देते हुए कहा है कि यही आगे चलकर जनता द्वारा ''लहर तालाब'' बना दिया गया होगा।

कुछ प्रामाणिक ग्रन्थों में कबीर के सम्बन्ध में कई घटनाएं पायी जाती है। नाभादास की रचना भक्तमाल में जो सन् 1585 में लिखी गयी थी कबीर के दृष्टिकोण का तत्कालीन सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में स्पष्ट उल्लेख है। अबुल फजल लिखित '' आइन–ए–अकबरी'' में, जो अकबर महान के 42 वें वर्ष में सन् 1598 में लिखी गयी थी, कबीर के बारे में दो स्थानों–पृष्ठ 129 तथा 171 पर जिक्र मिलता है। इनमें कबीर को ''मुवाहिद'' अर्थात अद्वैतवादी कहा गया है। इनकी दो मजारें एक जगन्नाथपुरी तथा दूसरी रतनपुर (अवध) में भी बतायी गयी हैं। इसमें आगे लिखा है– '' आध्यात्मिक दृष्टि का द्वार उनके सामने अंशतः खुला था और उन्होंने अपने समय के सिद्धान्तों का भी प्रतिकार कर दिया था। हिन्दी भाषा में धार्मिक सत्यों से परिपूर्ण उनके अनेक पद आज भी विद्यमान हैं। ''कश्मीर के मोहसिन फानी द्वारा 17 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में लिखित फारसी इतिहास ''दविस्ता'' में कबीर के सम्बन्ध में कई बातें लिखी मिलती हैं जो अन्यत्र वर्णित घटनाओं में मिलती जुलती हैं। इसमें लिखा है– ''कबीर जुलाहे और ऐकेश्वरवादी थे। कोई आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक मिले, इस इच्छा से वे हिन्दू साधुओं एवं मुसलमान पीर फकीरों, दोनो के पास गये। अन्त में जैसा कहा गया है, रामानन्द के शिष्य हुए। ''इनके अतिरिक्त अन्य कोई प्रामाणिक ग्रंथों, जैसे सन्त तुकाराम के गाथा अभंग 3241, अनन्त दास लिखित ''कबीर साहब जी की परचई'' और सन् 1604 में पांचवें गुरु अर्जुन देव द्वारा संग्रहित गुरुग्रन्थ साहब'' में सन्त कबीर के बारे में अनेक बातें कही गयी हैं, जो सत्य प्रतीत होती हैं। पर इनमें कहीं भी कबीर के जन्म स्थान और जन्म के सम्बन्ध में सूचना उपलब्ध नहीं हैं।

उपरोक्त तथा अन्य ग्रंथों में कबीर के जन्म–मरण के स्थान और तिथि के सम्बन्ध में जो परस्पर विरोधी बातें कही गयी हैं उनके अध्ययन से हम किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचते हैं। हाँ, सर्वमान्य तथ्य उभर कर सामने जरूर आता हैं कि कबीर ने अपने जीवन के अधिकांश भाग वाराणसी में व्यतीत किये और जीवन के कुछ अंतिम वर्ष मगहर में। उनका पालन–पोषण एक जुलाहा दम्पत्ति नीरु और नीमा द्वारा किया गया था। उनकी पत्नी का नाम ''लोई'' पुत्र का नाम कमाल और पुत्री का नाम कमाली था। वे जुलाहे का काम करके अपना तथा अपने परिवार का भरण–पोषण करते थे। वे रामानन्द के साथ–साथ कबीर झूसी के शेख तकी के समकालीन थे जिसने उनके स्वतंत्र विचारों के चलते अनेक यातनाएं दी थीं। कबीर की मृत्यु–तिथि के बारे में भी बहुत मतभेद हैं। कुछ लोगों के अनुसार उनकी मृत्यु मगहर में 1575 में हुई थी।

कबीर पढ़े–लिखे नहीं थें। उन्होंने एक स्थान पर कहा है–मसि कागद छुओ नहीं, कलम गह्यो नहीं हाथ। कबीर ने जो ज्ञानार्जन किया, वह साधु–सन्त और पीर–फकीरों की संगति के द्वारा ही किया । उन्होंने एक दूसरे स्थान पर कहा है– मैं कहता अंखियन देखी, तू कहता कागद की लेखी । एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा है– कर विचार मन ही मन उपजी न कहीं गया न आया । कबीर की कविता में जो मिर्जापुरी और गोरखपुरी बोलियों की छाप है उसका मुख्य कारण उनका बहुत समय तक वाराणसी में रहना ही हो सकता है। उनके कुछ ग्रन्थों की हस्तलिपियां कैथी लिपि में हैं, पर उनके साहित्य में पंजाबी तथा खड़ी बोली के भी शब्दों का समावेश हुआ है। कुछ के अनुसार इसका मुख्य कारण या तो कबीर का भिन्न–भिन्न भाषा–भाषी साधु–सन्तों की संगति हो सकती है अथवा सम्पादकों की मनमानी।

कबीर के साहित्य में मात्रा की कमी–बेशी है। अलंकार का अभाव है, पर कविता में सन्देश मुख्य होता है, अलंकार गौण। उन्हें जनता को एक सन्देश देना था, वो भी जनता की भाषा में, सीधी–सादी शैली में। वे पिंगल के नियमों में बन्धकर रास्ता भूलने के लिए तैयार नहीं थे। फिर उनमें प्रतिभा, मौलिकता और गहराई की कमी नहीं थी। डॉ. राम कुमार वर्मा ने तो कबीर को एक उच्च कोटि का कवि ही नहीं बल्कि विश्व के एक महान कवि का दर्जा भी दिया है। उनका कहना है– ''उनकी विरहिणी–आत्मा की पुकार'' काव्य जगत में अद्वितीय है। रहस्यवाद के दृष्टिकोण से यदि उनकी ''पतिव्रता का अंग'' पढ़ा जावे तो ज्ञात होगा कि उनका कवित्व संसार के किसी भी साहित्य का श्रृंगार हो सकता है। ''कबीर ग्रंथावली के सम्पादक डॉ. श्याम सुन्दर दास ने ग्रन्थ की भूमिका में लिखा हैं – रहस्यवादी कवियों में कबीर का ही स्थान सबसे ऊंचा है। शुद्ध रहस्यवाद केवल उन्हीं का है। ''

किसी व्यक्ति के कृतित्व और व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन उसके युग के सन्दर्भ में ही हो सकता है। जिन दिनों कबीर अपने मत के प्रचार में लगे थे, देश के दो बड़े–बड़े सम्प्रदायों हिन्दू और मुसलमान में विभक्त था। मुस्लिम राज्य देश के एक बड़े भू–भाग पर स्थापित हो चुका था। काजी और मुल्ला अपेक्षाकृत ऊंचे स्तर से अपने धर्म–प्रचार में जुटे थे। राज्य धर्म रहने के अतिरिक्त इस्लाम, निम्न जातियों तथा अन्य प्रताड़ित हिन्दुओं की धार्मिक और सामाजिक समता देने के लिए तैयार बैठा था। उधर हिन्दू मतावलम्बी खासकर उच्च वर्णीय हिन्दू, समाज पर अपने परम्परागत विशेषधिकारों और हितों की रक्षा के लिए वर्णाश्रम धर्म तथा जप–तप यज्ञ, तीर्थाटन के नियमों को और कठोर बनाने में संलग्न थे। हिन्दू धर्म एकछत्र धर्म नहीं रह गया था उसे आन्तरिक संघर्ष और विद्रोह का भी सामना करना पड़ रहा था। कबीर के ही समय या कुछ पहले, गुरु रामानन्द दक्षिण के अलवारों की भक्ति परम्परा को उत्तर भारत लाये और कबीर, रैदास, सेना, धना ये सभी सन्त कवि निम्न जाति के थे, अपना शिष्य बनाया। इनके अनुसार जो भक्ति मार्ग में आ गया उस पर वर्णाश्रम धर्म के नियम लागू नहीं होते। भक्ति मार्ग में श्रेष्ठता जन्म की नहीं भक्ति मार्ग की होती है। कबीर के समय में सूफीमत भी भारत में आ चुका था। सूफी इस्लाम के एकेश्वरवाद में विश्वास नही रखते थे। वे उपनिषद के विशिष्ठद्वैत से अधिक नजदीक थे। इनके विचार अधिक उदार और आगे चलकर इन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों का सम्पूर्ण सम्मान प्राप्त किया।

स्थिति को समझने और उससे जूझने की कबीर में विलक्षण शक्ति थी। उन्हें समझते देर नहीं लगी कि हिन्दू–मुसलमानों के बीच जो मतभेद हैं, संघर्ष है उसके मुख्य कारण अन्धविश्वास और बाह्याडम्बर हैं, जबकि उनके मौलिक तत्व तो एक ही है। कबीर का भाषा पर असाधारण अधिकार था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तो उन्हें वाणी के डिक्टेटर मानते हैं। अतः कबीर ने अपनी ''लुकाठी'' के रूख को उधर मोड़ा और सन्त और गृहस्थ, हिन्दू और मुसलमान किसी को भी नहीं बख्शा। उन्होंने कहा कि नंगे रहने से मुक्ति मिलती होती तो वन के सभी हिरन स्वर्ग में होते। गंगा स्नान करने स्वर्ग मिलता तो उसकी सभी मछलियां जीवन–मरण के बन्धन से कभी मुक्त हो गयी होती। उनका कहना था कि जटा और दाढ़ी बढ़ाकर साधु ''बकरा'' भले हो जाये स्वर्ग के अधिकारी नहीं हो सकते, न ही मुंडन कराने से ही कुछ लाभ है। यदि कुछ होता तो दुनिया में एक भी भेड़ देखने को नही मिलती। असली चीज तो नाम हैं आसन मारि मंदिर में बैठने और पत्थर के पूजने में कुछ भी आने–जाने को नहीं। कबीर ने मुसलमानों को बेमानी रोज़ा–नमाज़, मुल्लाओं को ऊंची आवाज में नमाज पढ़ने और ''सुन्नत'' को इस्लाम धर्म का अभिन्न अंग मानने के लिए उन्हें आड़े हाथों लिया। उनका कहना था कि यदि खतना कराना इतना जरूरी था तो माँ के पेट में ही करा कर क्यों नहीं आये और औरतों को कैसे मुसलमान मानते हो ? वे तो उसके बिना हिन्दू और मुसलमान दोनों के घर में लगी। आचार्य द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'कबीर' में ठीक ही कहा है कि 'बाह्याचार' की निरथक पूजा और संस्कारों की विचारहीन गुलामी कबीर को पसन्द नहीं थी। '' डॉ. श्यामसुन्दर दास ने कबीर ग्रन्थावली की भूमिका में ठीक लिखा है, कबीर का सारा जीवन अन्धविश्वासों का विरोध करने में ही बीता था। ''

कबीर ने जप–तप, तीर्थ–यात्रा, मूर्तिपूजा इत्यादि कर्मकांडों को अन्धविश्वास मानकर विरोध किया है। नाभादास ने भक्तमाल (1558) में कबीर के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है, ''जोग, जग्य, व्रत, दान, भजन बिनु तुच्छ दिखाये। '' डॉ. परशुराम चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक '' उत्तरी भारत की सन्त परम्परा '' के पृष्ठ 182 पर कबीर के सम्बन्ध में लिखते हुए कहा है, ... इनकी रचनाओं मे बहुधा तीर्थ, व्रत, भेष, मूर्तिपूजा जैसी बाह्य बातों के प्रति इनकी अनास्था लक्षित होती है और अवतारवाद एवं शास्त्रविहित नियमों के प्रति विरोधाभास भी दिखाई पड़ता है। '' कर्मकांडो के सम्बन्ध में कबीर साहब का एक दोहा इस प्रकार है–

जप, तप, पूजा, अरचा, जोगि जग बौराना
कागद लिखी–लिखी जगत भुलाना
मन ही मन समान । ''

तीर्थयात्रा की कबीर ने जो भर्त्सना की है उससे बहुतों की भौंहे तन जाती हैं। वे कहते हैं

तीरथ गये तो वहि जूडे पानी न्हाय ।
कह कबीर सन्तों सुनों, राक्षस ह्वै पछिताय ।।
तीरथ भई विख वेलरी रही जुगन जुग छाय ।
कबिरन मूल निकंदियो, कौन हलाहल खाय ।।

छूत–छात सभी धर्मों, विशेषकर उनके आंरभिक स्तर पर मिलता है, पर हिन्दू धर्म में वह इस तरह समाया हुआ है कि अनेक प्रयासों और अनगिनत हानियों के बावजूद उसका पिण्ड छोड़ते नहीं

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

दिखता। जन साधारण ही इससे ग्रसित हो ऐसी बात नहीं है। [illegible] भी इसका पहुंचना दूर नहीं है। कबीर के समय में तो इसकी गिरफत और भी कड़ी थी। वाराणसी के तथाकथित साधु–सन्तों को निरूपित करते हुये कबीर कहते हैं, ''मुझे ऐसे सन्त अच्छे नहीं लगते जो टोकरे भर–भर कर पेड़े गटक जाते हैं। बरतन मांजकर ऊपर खाना खाते हैं कि किसी की भोजन पर छाया न पड़ जाए और लकड़ी धोकर जलाते हैं।

छूत की व्यापकता की ओर संकेत करते हुए कबीर साहब ने कहा है– '' जल में छूत है, थल में छूत है और ग्रहण के अवसर पर किरणों में भी छूत है, जन्म में भी छूत है और फिर मरने मे भी छूत है। कह तो रे पंडित कौन पवित्र है ? आंखों में भी छूत है, कानों में भी छूत है, उठते–बैठते तुझे छूत लगती है। यहां तक कि भोजन में भी छूत है। '' पर छूत की भावना सर्वाधिक चूल्हा–चौका में पाया जाता है । मजाक में तीन कनौजिया तेरह चूल्हा कहकर इसकी पराकाष्ठा की ओर लोग संकेत करते पाये जाते हैं। कबीर ने कहा है,

'' एकै पवन, एक ही वाणी,
करि रसोई न्यारी जानी।
माटी सूँ माटी ले पोती,
लांगी कहों कहों कहा छू छोती।
धरती लीपि परित्तर कीन्हीं,
छोत्ति उपाय लीक विचि दीन्ही।
या का हम सूँ करों विचारा क्यों भव तीरहौं,
इति, आचारी । ''

छूत–छात चूल्हा या व्यक्तिगत जीवन तक ही सीमित होता तो कुछ बात नहीं थी, पर उसका रुप जटिल और समाज तक फैला हुआ था। अतः कबीर ने इसे गंभीरता से लिया जिसके संकेत उनके निम्नलिखित पद से मिलत है–

'' पंडित, देखा मन मो जानी।
कहु धौ छूत कहाँ ते
उपजी तबहिं छूत तुम मानी।
नाट्र बिन्दू रुधिर एक
संगै घट ही में घट सज्जै।
अष्ट कमल को पुहुयी आई कह ।
यह छूत उपज्जै।
लख चौरासी बहुत वासना
सो सब सरियों माटी।
एकै पाट सकल बैठारे सीचिं लेत धौं काटी।
छूतहि जेवन, छूतहि
अचवन छूतहि जग उपजाया।
कह कबीर ते छूत विवर्जित
जाके संग न माया। ''

कबीर जाति, वर्ण और आश्रम व्यवस्था के कट्टर वि[illegible] उपदेश[illegible]क ''भक्तमाल'' में कबीर के बारे में आगे लिखा है कबीरा राखी नहीं, वर्णाश्रम षट दरसनी। '' कबीर उस वैदिक सिद्धान्त के नहीं मानते थे कि चार वर्णों–ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की उत्पत्ति ब्रह्मा के क्रमशः मुख, भुजा, जाँघ और पांव से हुई है।

इस सम्बन्ध में उनका एक पद का अंश इस प्रकार है–

'' हाथ, पांव, मुख, जांघ ते झूठी जानो बात '' उनका तो विश्वास था, '' पांव तत्व का पूतरा, रज बीरज की बून्द । एकै घाटी नीसरा, ब्राह्मण क्षत्री सूद। '' कबीर के एक बहुत चर्चित पद का भावार्थ है कि यदि कोई ब्राह्मण गर्व करता है कि वह तो ब्राह्मणी की कोख से उत्पन्न हुआ है तो इसमें कोई विशेष तुक नहीं क्योंकि उसके और दूसरों की जन्म प्रक्रिया भी एक जैसी ही है। उन्होंने आगे कहा है, '' यदि एक काली और सफेद गाय के दूध के रंग में कोई फर्क नहीं है तो उसी प्रकार हमारे कैसे लहु, तुम्हारे कैसे दूध, तुम कैसे ब्राह्मण हम कैसे सूद। '' इस सम्बन्ध में कबीर का एक और पद है जिसके उदाहरण का लोभ मैं संवरण नहीं कर सकता। वह इस प्रकार है–

'' माटी एक सकल संसारा, बहु विध भांडे घड़े, कुम्हारा ।
एक बून्द एक मल मूतर, एक चाम एक गूदा।
एक जोत से सबै उत्पन्न, कौन ब्राह्मण कौन सूदा ।।

किसी व्यक्ति के बड़े–छोटे होने का कबीर का मापदंड जाति नहीं, कर्म था। इस सम्बन्ध में उनका कहना था–

'' ऊंचे कुल क्या जनमिया,
जो करणी ऊंच न होई ।
सोवन कलस सुरै भरया,
साधू निन्धा सोई ।। ''

कबीर की तो मान्यता थी कि किसी की भी जाति नहीं पूछनी चाहिए। साधुओं को माध्यम से उन्होंने अपनी इस बात को यों कहा है–

सन्त न जाति पूछो निर्गुनिया। '' वे कहते हैं : जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिये ज्ञान ।'' क्योंकि जाति से न कोई ऊंच है न कोई नीच। '' नहि कोऊ ऊंचा नहि कोई नीचा। जाका प्यंड ताही का सींचा। '' आचार्य द्विवेदी ने अपनी उपरोक्त पुस्तक ''कबीर'' पृष्ठ 186 पर कबीर के सम्बन्ध में यहाँ तक कहा है– '' वे मनुष्य मात्र को समान मर्यादा का अधिकारी मानते थे, व्यक्तिगत, जातिगत, कुलगत, आचारगत श्रेष्ठता का उनकी दृष्टि में कोई मूल्य नहीं था। ''

कबीर का व्यक्तित्व महान और बहुमुखी था। अतः उनके मूल्यांकन के सम्बन्ध में लेखकों और आलोचकों में मतभेद होना लाजमी है। कुछ उन्हें महाकवि मानते हैं तो कई मध्य युग के विद्रोही जन कवि। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी उन्हें महान मानते हैं, पर भक्त के रूप में। कबीर के काव्यत्व तथा समाज सुधार के रूप को वे एक बाईप्रोडक्ट मानते हैं। फोकट का माल जो, '' कोलतार और सीरे की भांति और चीजों को बनाते–बनाते अपने आप बन गया है। पर डॉ. रामकुमार वर्मा कबीर को विश्व कवि के अलावा एक उच्च कोटि का समाज सुधारक मानते हैं। अपने ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास का पृष्ठ 264 पर वे लिखते हैं, '' यद्यापि कबीर के उपदेश धार्मिक सुधार तक है क्योंकि भारतीय धर्म के अन्तर्गत '' दर्शन ', नैतिक आचरण एवं कर्मकांड तीनों का समावेश है। '' इसी तरह डॉ. परशुराम चतुर्वेदी कबीर को एक सर्वागीण सामाजिक क्रान्तिकारी मानते हैं। अपनी पुस्तक उत्तरी भारत की सन्त परम्परा के पृष्ठ 218 पर वे कहते हैं– ''ये जीवन के किसी विशेष पहलु पर ही अधिक जोर न देकर उसका पूर्णतः कायापलट कर देना चाहते थे। इन्हें परलोक जैसे काल्पनिक प्रदेश में आस्था नहीं थी। ये इहलोक को ही आदर्श व्यक्तियों के प्रभाव से स्वर्ग बना दिए जाने में विश्वास रखते थे । ''

सर विलियम हंटर ने कबीर को 15वीं सदी का भारतीय लूथर बताया है। कबीर ने संघर्षरत हिन्दू और इस्लाम धर्म के ठेकेदारों–काजी और मुल्ला एवं पंडित और पुजारियों के बाह्याचारों तथा अन्धविश्वासों का खंडन करते हुए पूछा,– '' ये दो जगदीश कहाँ से आये ? क्या अल्लाह, राम, और करीम उसी परमेश्वर के विभिन्न नाम नहीं हैं ? और पूजा नमाज क्या उसी परवरदिगार की इबादत के अलग–अलग ढंग नही है ? '' इस तरह अपने विचारों और वाणियों द्वारा आज से लगभग 500 वर्ष पहले उन्होंने एक धर्मनिरपेक्ष समाज की कल्पना ही नहीं की, नींव भी रखी। सामन्तवाद के विरुद्ध सदियों से चल रही लड़ाई को वाणी देकर '' साई के सब जीव हैं कीरी कुंजर दोय '' का नारा बुलन्द करके कबीर ने एक नये युग का सूत्रपात किया, जहाँ लोग मानव अधिकारों, धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक का उपभोग कर सकें। धार्मिक अधिकारों की तत्कालीन लड़ाई अपने में सामाजिक अधिकारों और आर्थिक न्याय की माँग को समेटे हुई थी। कबीर सचमुच एक नये युग के प्रवर्तक थे, युग निर्माता थे।

साभार –
भारत के सामाजिक क्रान्तिकारी
लेखक देवेन्द्र कुमार बेसन्तरी

हमारी आन्दोलन–प्रेरणा ही दक्षिण से आई–कांशीराम

(बंगलौर)

डी–एस4 द्वारा अ.भा. स्तर पर चलाये जा रहे 'समता और स्वाभिमान के संघर्ष' आन्दोलन के संदर्भ में एक विशाल जनसभा का आयोजन बंगलौर में 3 जनवरी 1984 को 'अराजपत्रित अधिकारी भवन' कृष्वन पार्क में किया गया। सभागृह महिला तथा पुरुषों से खचाखच भरा हुआ था।

सभा के प्रमुख वक्ता और डी–एस4 के अध्यक्ष मा. कांशीराम जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में बामसेफ के निर्माण से लेकर डी–एस4 के निर्माण आन्दोलन प्रेरणा ही दक्षिण से आई है। परन्तु दक्षिण में अभी तक हमारी कोशिश बड़े पैमाने पर कामयाब नहीं हो पाई है। आपने आगे यह भी कहा कि महात्मा ज्योतिबा फुले, नारायण गुरुजी, पेरियार रामास्वामी नायकर तथा बाबा साहब डा. अम्बेडकर दक्षिण के ही रहने वाले थे, इसलिए हम सहयोग और प्रेरणा के लिए दक्षिण की ओर देखते हैं।

मंडल आयोग और पिछड़ा वर्ग

मंडल आयोग की सिफारिशों की ओर जनसमूह का

ध्यान केन्द्रित करते हुए आपने कहा कि हम बात तो 90 प्रतिशत भाग की करते हैं, परन्तु उसे पाने के लिए 90 आदमी भी इकट्ठे नहीं कर पाते यह तो हालत पिछड़े वर्ग की है।

जनसभा को प्रो. सिद्धार्थ आराकेरी एड. (पूर्व विधायक), डा. भिमप्पा (पिछड़ा वर्ग आयोग के सदस्य), प्रो. डा. मुमताज अली खान, प्रो. जोन बी. कटीना (ईसाई नेता), डी. के. कम्पाराजू (संपादक, बहुजन संदेश साप्ताहिक) ने सम्बोधित किया तथा डी–एस4 के कार्यकर्ता नागराजू ने आधार व्यक्त किया। कार्यक्रम को सफल बनाने में गोपाल, बसवलिंगप्पा, सिद्धराजू, नागराजू आदि ने सक्रिय सहयोग किया।

(बहुजन संगठन, वर्ष 4, अंक 49, 12 मार्च, 1984)

lkHkkj %
ek- dk'khjke lkgc
d ,frgkfld Hkk"k.k [k.M&2
i`t l[;k 268 l 269 rd
,- vkj- vdyk

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और दबायें।

जाति बदलना समाधान नहीं

सन् 1922 के आसपास दिल्ली में प्राचीन भारत के संपादक देवीदास जी ने जटिया चमारों की एक सभा बुलाई थी। इस सभा में जटिया चमारों को उन्होंने यादव क्षत्रिय बताया था। जटिया चमारों को यादव क्षत्रिय बनाने के लिए बकायदा एक आंदोलन भी चलाया गया था। इसी सिलसिले में आगरा से एक 'यादव' नामक पत्र भी निकाला गया। इसमें अहीरों को चुनौती दी गयी थी कि वे असली यदुवंशी नहीं हैं। असली यदुवंशी जटिया हैं। अब इन्होंने अपना गोत्र 'जाटव' गढ़ा। बाद में डॉ. मानिक चन्द और उनके साथियों ने मिलकर सर्व सममति से फैसला किया कि वे सभी अपने नाम के आगे 'जाटववीर' लगायेंगे। 1920 में उनकी अध्यक्षता में भारत वर्षीय जाटववीर युवा परिषद का गठन हुआ। इस परिषद् ने 26 अक्टूबर 1938 को इंग्लैंड में भारतीय मामलों में मंत्री लार्ड जटलैंड को एक यापन दिया था। उस ज्ञापन में यह माँग की गयी थी आगरा के जटिया चमारों को स्थाई रिकार्ड में चमार न लिखा जाये। उन्हें अब 'जाटव' लिखा जाये, क्योंकि 'चमार' एक अपमान जनक शब्द है।

लेकिन यहि हम गहराई से देखे तो इतनी लम्बी–चौड़ी कवायद के बाद भी आखिर हुआ कुछ नहीं। 'चमार' शब्द ने इन नव जाटवों का पीछा नहीं छोड़ा। अब वे जाटव चमार हैं।

उधर 1930 के आसपास चमारों के गोत्र चानोर के नेता दिल्ली निवासी मुंशी किशन सहाय थे। उन्होंने पाया कि 'चानोर' गोत्र राजपूतों, गूजरों, जाटों में भी है, अतः उन्होंने चमार, चानोरों को उत्तम क्षत्रिय घोषित करने के प्रयास किया। 'गहलोत' गोत्र के चमारों ने खुद को 'गहलोत क्षत्रिय' घोषित करने के लिए आन्दोलन किया। इसके बाद सन् 1941 की जनगणना में कइयों ने खुद को 'सूर्यवंशी', 'चंद्रवंशी' लिखवाया। लेकिन आज वे सूर्यवंशी चमार, चंद्रवंशी चमार कहे जाते हैं।

इसी तरह का एक प्रयास जैसवार गोत्र के चमारों द्वारा किया गया था। वे अपने आपको 'जैसवार राजपूत' कहलवाने लगे थे। इन्होंने तो अपनी एक 'जैसवार राजपूत महासभा' भी रजिस्टर्ड करवाई थी। जब सवर्णों ने इन्हें भी 'जैसवार चमार' कहा तो कइयों ने मानहानि के मुकद्दमें भी किये थे। उपरोक्त आन्दोलनों से जुड़े लोगों के वंशज आज समाज में तो चमार है ही, सरकारी अभिलेखों में भी वे चमार वर्ग में ही है।

अपने ऊपर हो रहे अमानवीय अत्याचारों से बचने के लिए ये प्रयास जाति बदलकर ही नहीं हुए, बल्कि धर्म बदलकर भी किये गये, लेकिन मिला क्या? चमार ईसाई बने तो वहाँ उनके नाम के साथ 'मसीह' शब्द जोड़ दिया। वे आर्य समाजी बने तो उन्हें 'महाशय जी' कहा जाने लगा। वे सिख बने तो वहाँ उन्हें 'मजहबी रामदासी' उपनाम मिले। वे मुसलमान बने तो वहाँ उन्हें 'सक्का', 'लाल बेगी' जैसे नाम मिले। कहने का अर्थ यह कि इनकी पुरानी पहचान वहाँ भी किसी न किसी रूप में कायम रखी गयी। इनके लाख चाहने पर भी इन्हें किसी ने अपने वर्ग में नहीं खपाया। हर कहीं इनके ऊपर दमन का चक्र घूमता रहा।

1920 की रिपोर्ट के मुताबिक पैंतालिस हजार चमारों को ईसाई धर्म में बपतिस्मा दिया जा चुका था। 1920 से इन पंक्तियों के लिखे जाने तक का पता नहीं कितने चमार आर्य समाजी बन चुके हैं। चमार घोषित–अघोषित रूप से ईसाई बन चुके हैं। 1920 में ही पूरे भारत के 10,811 चमार मुसलमान धर्म की दीक्षा ले चुके हैं। उधर सिख धर्म में चमारों की बहुत बड़ी संख्या प्रवेश कर चुकी है। एक रिपोर्ट के अनुसार हर दूसरा निहंग चमार है। हजारों चमार आर्य समाजी बन चुके हैं।

जाति को हथियार बना लो

सवाल उठता है कि ऐसे प्रयासों से आखिर मिला क्या? क्या वहाँ पर भी जाति के कलंक ने पीछा छोड़ा? क्या वहाँ पर भी सामाजिक समानता हासिल हुई? यदि वहाँ भी यहीं सब सहना है तो फिर अपने भाइयों से दूर जाने से क्या फायदा? मैं चमार भाईयों से मार्मिक अपील करना चाहूँगा कि भाईयों आपके महान पुरखों ने घोर उत्पीड़न सहते हुए गाँवों की सीमाओं से बाहर रहना स्वीकार कर लिया था लेकिन वे ब्राह्मण धर्म की गंदगी, वर्ण–व्यवस्था से बाहर ही रहे। आप क्यों सूर्यवंशी बनने के प्रलोभन में फँसते हो? क्यों आर्य समाजी बनते हो? बेहतर होगा कि आप अपनी जाति को ही हथियार बनाओं। हमारा इतिहास कितना गौरवशाली है? आप कितने महान लोगों की संताने हैं। आपके बीच कितने महान संत और राजनीतिज्ञ पैदा हुए? क्यों न इस जाति को अपना हथियार बनाते हुए अपनी चहुंमुखी उन्नति

lkHkkj%
pekj tkfr bfrgkl vkj lLÑfr
i`t l[;k 144 ls 145 rd
,l-,l-xkre
Mk- vkj-,e-,l-fot;h

दलित राजनीति को नई बुलंदी पर पहुंचाया था कांशीराम ने

उत्तर प्रदेश में दलितों को हाशिए से निकालकर राजनीति के रंगमंच के केंद्र में लाने वाले बहुजन समाज पार्टी (बसपा) के संस्थापक कांशीराम अपने राजनीतिक कौशल से कांग्रेस जैसे राष्ट्रीय दलों को भी तगड़ा झटका देने में कामयाब रहे।

कांशीराम भारतीय राजनीति में एक अबूझ पहेली थे। उन्होंने पूरे देश में दलित आंदोलन को एक उभार देने की कोशिश की। लेकिन उन्हें उत्तर प्रदेश के अलावा जिस प्रदेश में उल्लेखनीय सफलता मिली, वह था मध्य प्रदेश।

कांशीराम ने 1978 में सरकारी दलित मजदूरों के हितों के संरक्षण के लिए एक संगठन का गठन किया। 1989 में उन्होंने राजनीतिक फोरम डी एस–4 'दलित शोषित समाज संघर्ष समिति' की स्थापना की।

1987 में कांशीराम ने इलाहाबादमें वी पी सिंह के खिलाफ लोकसभा उपचुनाव में अपनी किस्मत आजमाई। लेकिन उन्हें हार का मुंह देखना पड़ा। चार साल बाद 1991 में उत्तर प्रदेश के इटावा से जीतकर उन्होंने लोकसभा में प्रवेश किया।

दलित सिख पृष्ठभूमि के राजनीतिक कांशीराम का जन्म 15 मार्च 1934 को हुआ था। 1984 में उन्होंने बहुजन समाज पार्टी की स्थापना की और मायावती के साथ 1995 में वे बसपा को उत्तर प्रदेश की सत्ता में लेकर आए। वे 1996–97 में 11वीं लोकसभा के भी सदस्य रहे। दिसंबर 2001 में लखनऊ में एक विशाल राजनीतिक रैली में उन्होंने मायावती को अपना राजनीतिक उत्तराधिकारी घोषित किया और बाद में वे पार्टी की अध्यक्ष बनीं।

कांशीराम बाद में मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसी कई बीमारियों के शिकार हो गए। मायावती के निवास पर वे बिस्तर पर रहे। उनके परिजनों ने आरोप लगाया कि मायावती ने उन्हें बंधक बनाकर रखा है ताकि बसपा पर नियंत्रण कर सकें।

इस मामले को लेकर कांशीराम की 90 साल मां बिशन कौर पिछले साल सुप्रीम कोर्ट पहुंची। उन्होंने आरोप लगाया कि परिवार के सदस्यों को कांशीराम से मिलने नहीं दिया जा रहा। मायावती की देखभाल में चल रहे अपने बेटे के इलाज पर भी उन्होंने संदेह जताया।

कौर की याचिका स्वीकार करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) को कांशीराम की मानसिक और शारीरिक स्थिति की जांच के लिए चिकित्सकों की एक टीम गठित करने के निर्देश दिए। न्यायालय ने संस्थान को यह पता लगाने के भी निर्देश दिए। न्यायालय ने संस्थान को यह पता लगाने के भी निर्देश दिए कि क्या कांशीराम को अस्पताल में भर्ती किए जाने की जरूरत है।

इस साल मार्च में कांशीराम अपने 72वें जन्मदिवस के मौके पर अंतिम बार सार्वजनिक तौर पर दिखे थे। उनका जन्मदिन मनाने के लिए दिल्ली के तलाकटोरा इंडोर स्टेडियम में बड़ी संख्या में पार्टी कार्यकर्ता विधायक और समर्थक जुटे थे।

lkHkkj%
cg`tu uk;d ekU;oj dk'khjke Lefr xzaFk
i`t l[;k 79
,l-,l-xkre

गुरुत्त्वाकर्षण शक्ति की खोज

न्यूटन ने बाग में पेड़ से सेव को गिरते हुये देखकर गुरुत्वाकर्षण शक्ति की खोज को दुनिया के सामने रखा और इस शक्ति के विस्तृत क्षेत्र को स्पष्ट किया। प्रत्येक आकाश पिंड अपने 2 आकर्षण क्षेत्र की सीमा से सभी वस्तुओं को अपनी ओर खींचते हैं। उसने संहति (mass = जड़त्व) की परिभाषा इस प्रकार की कि संहति पदार्थ का वह परिमाण है जो उसके घनत्व (density) तथा आकार (Volume) को गुणा करने पर ज्ञात हो। न्यूटन ने बताया कि पदार्थ के कारण एक दूसरे को उस अनुपातिक शक्ति के साथ आकर्षित करते हैं जो दो संहतियों के गुणनफल तथा उनके बीच की दूरी के वर्ग से विलोम अनुपात में है। न्यूटन ने अपने गति के सिद्धान्त को संक्षिप्त करते हुये बताया कि गति में परिवर्तन का मतलब यह है कि वेग के परिवर्तन की दर गतिमान शक्ति के अनुपात में होती है। उसके आगे फिर कहा कि समान शक्तियाँ पदार्थ के विभिन्न अंशों पर आसमान वेग वृद्धि उत्पन्न करते हुये पाये जाते हैं और प्रत्येक अंश का जड़त्व जो शक्ति के अवरोध का कारण होता है, उसे संहति कहते हैं और उस (संहति) को प्राप्त शक्ति के द्वारा उत्पन्न वेग वृद्धि का विरोधी बताया है। $m = f/a$, $f = \frac{MV}{T} = ma$ वेग के परिवर्तन की दर को वेग वृद्धि कहते हैं। $mv = ft$ वेग की वृद्धि शक्ति तथा समय का गुणनांक होती है। वेग वृद्धि mv ही mx है। mv = mx यहाँ पर a = acceleration (वेग वृद्धि), t = time (समय) तथा X = force (शक्ति) में प्रयुक्त हुये हैं। अतएव शक्ति, संहति तथा वेग वृद्धि का गुणनांक है। उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट है कि न्यूटन ने पदार्थ तथा गति की पृथकता तथा दूरी व समय की निरपेक्षता का प्रतिपादन किया है। मध्य युग में कोपरनिक्स, गैलिलियो न्यूटन, देकार्ते तथा हाईगींस की खोजों के कारण मैकेनिक्स (यंत्र विद्या) का विकास हुआ।

lkHkkj%
f'k{kk dk vfgalk Økfr
i`t l[;k XIV ls XVI rd
eypUn fo|kFkh

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

महापरिनिर्वाण

गौतम बुद्ध की आयु अस्सी वर्ष की हो गई थी। उनको अपन अन्त समय निकट आता दिखाई देने लगा था। उन्होंने एक दिन आनन्द से कहा, ''आनन्द! मैं वृद्ध हुआ, अस्त्री वर्ष का हुआ। पुरानी गाड़ी जिस प्रकार मरम्मत करके चलाई जाती है, उसी प्रकार मैं यह शरीर चला रहा हूं। आनन्द अब तुम स्वयं अपने अलम्बन बनो। धर्म ही दीपशिखा है, सत्य ही तुम्हारा चिरसखा है।''

आनन्द को यह सब सुन कर दुख हुआ किन्तु वह विवश था।

अपने अन्तिम समय में बुद्ध ने अनेक स्थानों पर जाने की इच्छा व्यक्त की। यह संवाद उन्होंने वैशाली में वेलुग्राम में किया था उसके बाद उन्होंने आनन्द से चापाल चैत्य जाने के लिए कहा। वहां पहुंच कर उन्होंने भिक्षु संघ को उपदेश किया और फिर आनन्द से बोले, ''आनन्द! मैंने तुम्हें पहले ही बताया था कि प्रियों से वियोग होता है। मेरा परिनिर्वाण समीप आ रहा है। तीन मास पश्चात मेरा परिनिर्वाण होगा।''

वैशाली से तथागत ने मण्डग्राम जाने की इच्छा व्यक्त की। कुशीनगर के मार्ग में उन्होंने भोगनगर और पावा में विश्राम किया। पावा में उन्होंने चुन्द कर्मकार पुत्र के आम्रवन में विहार किया। चुन्द ने भगवान को दूसरे दिन के भोजन के लिए आमन्त्रित किया, भगवान ने मौन स्वीकृति दी।

दूसरे दिन भोजनोपरान्त उनको मरणान्तक पीड़ा होने लगी। उनकी पूर्व की रक्तस्त्राव की व्याधि बढ़ गई। वहां से वे कुशीनगर जाने लगे। मार्ग में कुकुत्था नदी पड़ती थी। उसके निकट पहुंच कर तथागत एक वृक्ष के नीचे बैठ गये। आनन्द नदी से जल लाये। तथागत ने जल पिया। कुछ विश्राम करने के उपरान्त वे जल में स्नान करने के लिए गये। स्नानोपरान्त उन्होंने चुन्द से कहा कि वे थक गये हैं, विश्राम करेंगे। चुन्द ने संघाती बिछा दी।

उन्होंने आनन्द से कहा, ''आनन्द! चुन्द को इस चिन्ता से मुक्त करना। उसको कहना कि उसके यहां भोजन करने के कारण मैं व्याधिग्रस्त नहीं हुआ था। उसे आपने मन में विषाद नहीं लाना चाहिये। उसका भोजन प्राप्त कर मैंने परिनिर्वाण प्राप्त किया है।

''आनन्द! मेरे जीवन में दो भोजन विशेष महत्व रखते हैं। सुजाता का भोजन प्राप्त कर मुझे सम्यक् सम्बोधि प्राप्त हुआ था और चुन्द कर्मकार के भोजन के पश्चात निवार्ण प्राप्त कर रहा हूं।

वहां से बुद्ध कुशीनगर के शालवन में गये। वहां विश्राम कर रहे थे, तब उन्होंने आनन्द से कहा था, ''आनन्द! संस्कृति अनित्य है। श्रद्धालु कुलपुत्रों के लिये लुम्बिनी बुद्ध गया, सारनाथ तथा कुशीनगर यह चार स्थान दर्शनीय हैं।''

आनन्द ने पूछा, 'भन्ते! स्त्रियों के साथ हमारा व्यवहार कैसा होना चाहिये?''

''अदर्शनीय और यदि दर्शन हो जाय तो आलाप नहीं करना चाहिये। यदि आलाप करना पड़ जाय तो स्मृति को संयमित रखना चाहिये।''

कुछ क्षण रूक कर आनन्द ने पूछा, ''आपके शरीर की अन्त्येष्टि हम किस प्रकार करें?

''चक्रवर्ती के शरीर के साथ जो क्रिया की जाती है वही इस शरीर के साथ करना। शरीर को नवीन वस्त्र में लपेटकर, तेल की लौह द्रोणी में रखकर चिंता में भस्म कर दिया जाता है। भस्त होने पर चौराहे पर स्तूप बनाया जाता है।''

आनन्द को रोते देख कर उन्होंने कहा, ''आनन्द! शोक मत करो, प्रिय का वियोग अवश्यम्भावी है। जो उत्पन्न हुआ है, उसका विनाश होगा। शरीर नाश से बच जाय यह असम्भव है।''

बुद्ध को अन्तिम समय कष्ट हो रहा था। ऐसे अवसर पर एक भक्त शंका समाधान के लिए आया, तथागत ने उसकी शंकाओं का समाधान किया। अन्त में उन्होंने आनन्द से कहा, ''आनन्द! मेरे पश्चात तुम्हारा कोई शास्ता नहीं होगा। मेरा उपदेश ही तुम्हारा शास्ता है।''

कदाचित इस परम्परा के अनुसार ही कालान्तर से लगभग दो सहस्र वर्ष के उपरान्त गुरु गोविन्द सिंह ने भी इसी प्रकार अपनी सिख संगत से कहा था – ''मेरे पश्चात अब कोई मनुष्य प्राणी आप लोगों का गुरु नहीं होगा। अब आपका गुरु 'गुरुवाणी' अर्थात ग्रन्थ साहब होगा।''

उन्होंने उस समय कहा था– 'गुरु मान्यो ग्रन्थ'।

इस विषय पर यहां विशेष कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है। जब कभी गुरुगोविन्द सिंह की जीवनी लिखने का अवसर आयेगा तब इस पर विचार किया जायेगा कि उन्होंने ऐसा क्यों किया था।

बुद्ध का जब अन्तिम समय आया तो उन्होंने भिक्षु संघ को एकत्रित कर सम्बोधित किया। कहा, ''भिक्षुओ! धर्म कहता हूं। संस्कार व्ययधर्मा है, अप्रमाद के साथ जीवन सम्पादन करो।''

इसके उपरान्त बुद्ध ने प्रथम ध्यान प्राप्त किया, उससे उठकर द्वितीय ध्यान प्राप्त किया, फिर तृतीय और फिर चतुर्थ। तदनन्तर आकाश नन्त्यायतन को प्राप्त किया। विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त किया। आकिंचन्यायतन को प्राप्त किया। नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त किया। संज्ञा वेदयित निरोध को प्राप्त किया।

आनन्द ने अनिरूद्ध से कहा, ''भन्ते! अनिरूद्ध! भगवान परिनिवृत्त हो गये।''

उनके पिरिवृत्त होते ही भीषण भूकम्प होने की परिपाटी प्रचलित है।

तथागत के शरीर का चक्रवर्ती सम्राट वत अन्तिम संस्कार किया गया।

अजातशत्रु को विदित हुआ तो उसने अपने दूत के माध्यम से कहलवाया, ''अस्थि पर मैं स्तूप निर्माण करूंगा, मैं पूजा करूंगा।''

वैशाली के लिच्छवियां, कपिलवस्तु के शाक्यों, अल्लकप्प के बलियों, रामग्राम के कोलियों, विष्णुद्वीप के ब्राह्मणों, पावा के मल्लों आदि सबने अजातशत्रु की भांति अस्थि पर अपना अधिकार जताने का यत्न किया। उस समय द्रोण ब्राह्मण ने कहा, ''तथागत क्षमाशील थे, तो क्या उनके अस्थिविभाजन में विवाद होगा? यह नहीं होना चाहिये। आप इन अस्थियों को आठ भागों में विभाजित कर दीजिये और आठो दिशाओं में बुद्धस्तूप का निर्माण कराइये।''

अस्थि विभाजित होने के उपरान्त मोरियों ने अस्थि मांगी किन्तु वह विभाजित हो चुकी थी। कोयले शेष थे उन्होंने कोयले ले लिये।

तथागत की अस्थि तथा कोयलों पर दस स्तूपों का निर्माण हुआ। राजगृह में अजातशत्रु ने, वैशाली में लिच्छवियों ने, कपिलवस्तु में शाक्यों ने, अल्लकप्प के गुलियों ने, रामग्राम के कोलियों ने, विष्णुद्वीप के ब्राह्मणों ने, पावा के मल्लों ने कुशीनगर के मल्लो ने स्तूप बनवाए और नवां स्तूप तुम्ब पर ब्राह्मणों ने बनवाया, उसका नाम कुम्भस्तूप हुआ। दसवां स्तूप पिप्पलीवन में मोरियों ने कोयलों का बनवाया उसका नाम अगार स्तूप रखा गया।

lkHkkj ½
;x iorld
i`t l[;k 136 l 138
xk`re c)

हम माँगने की आदत छोड़कर कुछ देने की आदत डालनी चाहिए–कांशीराम

(फगवाड़ा)

दलित–शोषित समाज संघर्ष समिति (डी–एस4) दिल्ली की जिला कपूरथला शाखा के तत्वावधान में 15–16 जून, 1982 को विशाल सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें 15 हजार से अधिक लोगों ने भाग लिया। 16 जून 1982 को मधयान्ह 11 बजे सम्मेलन का आरम्भ जागृति जत्था कार्यक्रम से हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डी–एस 4 के संस्थापक अध्यक्ष मा. कांशीराम जी के साथ–साथ अनेकों गणमान्य नेताओं तथा सामाजिक कार्यक्रर्ताओं ने भाग लिया।

सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए डी–एस4 के संस्थापक अध्यक्ष मा. कांशीराम जी ने कहा कि पिछले तीन साल से मैं फगवाड़ा के इस समारोह में आया हूँ किन्तु इस बार मैं अपने विचार आपके सामने रख रहा हूँ। भारत में इस तरह के 100 मेले लगने हैं उन सभी में मुझे जाना होगा, क्योंकि इस दलित–शोषित लोगों को संगठित करके डी–एस4 के झंडे के नीचे लाना है। आपने कहा कि दलित–शोषित समाज संघर्ष समिति जो कि सिर्फ संघर्ष के लिए बनाई गयी है, जिसे कि दलित–शोषित समाज के उद्धार के लिये काम करना है परन्तु डी–एस4 के ऊपर ऐसा कोई बन्धान नहीं है कि वह

राजनीति में हिस्सा न ले सके। इसीलिए डी–एस4 द्वारा अभी–अभी हरियाणा में चुनाव में भाग लिया गया और हम अपने लक्ष्य में पूरे उतरे। भारत की प्रमुख राजनैतिक पार्टियों के साथ जबरदस्त टक्कर ली और जल्द ही यह भारत की अन्य पार्टियों के बराबर पहुँच जायेगी। तब यह बाबा साहब के सपने को साकार करने में समर्थ होगी।

यह कार्यक्रम सायं 5 बजे तक चला और समापन पंजाबी समूह नृत्य भांगड़ा में हुआ। कार्यक्रम का संयोजन मा. हरभजन सिंह लाखा ने किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता दुनीचन्द शाहपुरी ने की। सम्मेलन को चानन राम सरपंच, देवराज मल्ल, ने भी सम्बोधित किया।

(बहुजन संगठन, वर्ष 3, अंक 7, 4 अगस्त, 1982)

lkHkkj ½
ek- dk'khjke lkgc
ds ,frgkfld Hkk"k.k [k.M&2
i`t l[;k 38 l 39 rd
,- vkj- vdyk

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और दबायें।

सेवा में,
नाम ....
पता ....